अध्याय - 3

भारत में उद्योग

_हम पढ़ेंगे_

3.1 भारत में उद्योगों के प्रकार

3.2 भारत के विशिष्ट उद्योग एवं उनका वितरण

3.3 उद्योगों का राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में योगदान

3.4 औद्योगिक प्रदूषण व मानव जीवन पर प्रभाव

3.5 प्रदूषण नियंत्रण के उपाय

मनुष्य अपनी विविध आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु कुछ वस्तुएँ प्रकृति से सीधे प्राप्त करता है, कुछ प्रकृति के सहयोग से पैदा करता है तथा कुछ वस्तुओं का प्राकृतिक कारकों के सहयोग से निर्माण करता है। मनुष्य का वस्तु निर्माण करने का कार्य उद्योग कहलाता है। उद्योग की इस प्रक्रिया में मनुष्य कच्चे माल का उपयोग कर श्रम, शक्ति व तकनीक के माध्यम से आवश्यकतानुरुप पक्का माल तैयार करता है। कच्चे माल के इसी रुपान्तरण से विभिन्न उपयोगी वस्तुएँ निर्मित होती हैं। जैसे - मिट्टी या धातु से बर्तन, गन्ने से गुड़ या चीनी आदि।

भारत में उद्योग, गृह उद्योग के रूप प्राचीन काल में भी विकसित अवस्था में थे, किन्तु अंग्रेजों के शासन काल में यह व्यवस्था ध्वस्त हो गई। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद सन् 1948 में भारत की औद्योगिक नीति घोषित की गई। फलत: उद्योगों को राजकीय और निजी क्षेत्रों में विकसित किया जाने लगा। उद्योगों के विकास हेतु औद्योगिक नीति में सरकार द्वारा समय-समय पर परिवर्तन किए जाते रहे हैं। भारत की नवीनतम 'उदारीकरण' की आर्थिक नीति देश में देशी-विदेशी निवेशकों हेतु उद्योग लगाने के मार्ग खोल दिए हैं। फलत: बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की उद्योग जगत में सहभागिता बढ़ी है और भारत विश्व अर्थव्यवस्था में एक औद्योगिक देश के रूप में उभर रहा है। सूती वस्त्र के कुछ कारखानों में केवल सूत कातने का, कुछ में कपड़ा बुनने का, तथा कुछ मे कातने व बुनने का कार्य होता है।

वर्तमान युग में औद्योगिक विकास पर ही आर्थिक विकास निर्भर है। आर्थिक विकास से मनुष्य के जीवन स्तर में सुधार होता है तथा राष्ट्र मजबूत होता है। हमारे देश में औद्योगिक विकास के लिए निम्नांकित परिस्थितियाँ उपलब्ध हैं -

1. धरातलीय दशाएँ उद्योगों की स्थापना के अनुकूल हैं,
2. अधिकांश प्रदेशों में जलवायु दशाएँ सामान्य हैं,
3. देश में सस्ता श्रम उपलब्ध है,
4. खनिज, वन व कृषि आधारित कच्चे माल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं।
5. परिवहन तन्त्र का फैलाव समुचित है।
6. सघन जनसंख्या होने से विशाल बाजार उपलब्ध हैं।

तकनीकी एवं पूँजी का अल्प विकास भारतीय औद्योगिक प्रगति की मुख्य बाधाएँ हैं। भारत सरकार औद्योगिक विकास की दिशा में सजग है तथा इसके लिए निरंतर सकारात्मक कदम उठा रही है।

3.1 भारत में उद्योगों के प्रकार

उद्योगों का विभाजन - स्वामित्व, उपयोगिता, आकार, तैयार माल की प्रकृति तथा कच्चे माल के आधार पर किए जा सकता है।

1. **स्वामित्व के आधार पर** उद्योग चार प्रकार के होते हैं:-

(अ) निजी उद्योग : जो व्यक्तिगत स्वामित्व में होते हैं,

(ब) सरकारी उद्योग : जो सरकार के स्वामित्व में होते हैं,

(स) सहकारी उद्योग : जो सहकारी स्वामित्व में होते हैं,

(द) मिश्रित उद्योग : जो उपर्युक्त में से किन्ही दो या अधिक के स्वामित्व में होते हैं।

2. **उपयोगिता के आधार पर** उद्योग दो प्रकार के होते हैं -

(अ) आधार भूत उद्योग - वे उद्योग जो अन्य उद्योगों के आधार होते हैं। इनके उत्पादन अन्य उद्योगों के निर्माण तथा संचालन के काम आते हैं, जैसे लोहा-इस्पात उद्योग।

(ब) उपभोक्ता उद्योग - वे उद्योग जो लोगों की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने के काम आते हैं, वस्त्र, चीनी, कागज आदि।

3. **आकार के आधार पर** उद्योग चार प्रकार के होते हैं -

(अ) वृहद् उद्योग : औद्योगिक इकाइयाँ जिनमें पूँजी निवेश 10 करोड़ रूपये या उससे अधिक है, जैसे टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी।

(ब) मध्यम उद्योग : जिनमें कुल पूँजी निवेश 5 से 10 करोड़ रूपये के मध्य है, जैसे -चमड़ा उद्योग।

(स) लघु उद्योग : जिनमें कुल पूँजी निवेश 2 से 5 करोड़ रूपए तक है, जैसे- लाख उद्योग।

(द) कुटीर उद्योग : जिनमें पूँजी निवेश नाम मात्र का होता है तथा जो परिवार के सदस्यों की सहायता से चलाए जाते हैं। ग्राम में स्थित होने पर यह ग्रामीण उद्योग तथा नगर में स्थित होने पर नगरीय कुटीर उद्योग कहे जाते हैं।

4. **तैयार माल की प्रकृति के आधार पर** उद्योग दो प्रकार के होते हैं-

(अ) भारी उद्योग : जिनमें भारी वस्तुओं, मशीनों आदि का निर्माण किया जाता है, जैसे-ट्रेक्टर बनाने का कारखाना।

(ब) हल्के उद्योग : जिनमें दैनिक उपयोग की छोटी-छोटी वस्तुओं का निर्माण किया जाता है, जैसे-खिलौना उद्योग।

5. **कच्चे माल के आधार पर** उद्योग तीन प्रकार के होते हैं-

(अ) कृषि आधारित उद्योग : जिन्हें कच्चा माल कृषि उत्पाद से प्राप्त होता है, जैसे-सूती वस्त्र उद्योग।

(ब) खनिज आधारित उद्योग : जिन्हें कच्चा माल खनिजों से प्राप्त होता है, जैसे-लोहा-इस्पात उद्योग।

(स) वन आधारित उद्योग : जिन्हें कच्चामाल वनों से प्राप्त होता है, जैसे कागज उद्योग।

3.2 भारत के विशिष्ट उद्योग एवं उनका वितरण

उद्योगों का वर्गीकरण सरल होता है। इससे कच्चे माल के आधार पर प्रत्येक उद्योग की पृथक पहचान होती हैं। क्योंकि कच्चा माल प्रत्येक उद्योग की आवश्यकता है, कच्चे माल को 'उद्योगों का भोजन' कहते हैं। भारत के कुछ प्रमुख कच्चा माल आधारित उद्योग अध्ययन के लिए दिए जा रहे हैं।

❑ कृषि आधारित उद्योग

भारत कृषि प्रधान देश है। गेहूँ, चावल, मक्का, गन्ना, कपास आदि का उत्पादन उद्योगों में कच्चे माल के

भारत की सीमा रेखा भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र 2014 पर आधारित

रूप में किया जाता है, जैसे – गन्ना को चीनी उद्योग में, कपास को सूती वस्त्र उद्योग में कच्चे माल के रूप में प्रयोग किया जाता है।

कृषि मूल्य संवर्धन :-

भारत एक कृषि प्रधान देश है। इसलिए देश की अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण योगदान है। हमारे देश की कुल जनसंख्या का एक बड़ा भाग कृषि अथवा कृषि संबंधी अन्य उद्योगों के माध्यम से अपना जीवनयापन कर रहा हैं। विश्व के दूसरे विकसित देशों की तुलना में भारतीय कृषकों एवं ग्रामीण क्षेत्रों की स्थिति पिछड़ी हुई है। ग्रामीण लोगों की कृषि कार्यो में रूचि घट रही है और वे शहरों की ओर पलायन हो रहे है परिणामस्वरूप शहरों में कई गंभीर समस्याएं उभर कर सामने आ रही हैं। अत: आज यह आवश्यक हो गया है कि ग्रामीण क्षेत्रों का तीव्र गति से विकास किया जाये एवं रोजगार व आय संवर्धन हेतु उपाय किये जाये। इस दृष्टि से कृषि उपजों का मूल्य संवर्धन करना एक कारगार उपाय हो सकता हैं।

कृषि मूल्य संवर्धन से तात्पर्य है, कृषकों द्वारा ग्रामीण स्तर पर ही, कृषि उपजों के रूप व गुणों में परिवर्तन द्वारा उन्हें और अधिक उपयोगी बनाना,जिससे वे स्वयं उन्हें अधिक कीमत पर बेचकर अधिक लाभ अर्जित कर सकें।

कृषि मूल्य संवर्धन की आवश्यकता :-

यद्यपि कृषि देश का प्रमुख व्यवसाय रहा है तथापि अनेक कारणों से देश में एक तो कृषि उत्पादकता कम है, दूसरे कृषकों की आर्थिक स्थिति दयनीय है, तीसरे फसलों का एक बड़ा भाग व्यर्थ नष्ट हो जाता हैं। जैसे फल एवं सब्जी उत्पादन में विश्व में भारत का द्वितीय स्थान है किंतु कुल उत्पादन का लगभग 30 से 40 प्रतिशत भाग नष्ट हो जाता है और कृषक को हानि उठानी पड़ती हैं। इसके कई कारण है वस्तुत: फसल आने पर फल व सब्जी की सारी फसल एक साथ बिक नहीं पाती तथा उनका उपयोग अन्य उत्पाद बनाने में भी बहुत कम किया जाता हैं। इसके अतिरिक्त शीत गृह, शीत परिवहन के साधनों आदि की सुविधाओं का भी अभाव है। परिणामत: देश में फल व सब्जी के कुल उत्पादन का केवल 1 से 2 प्रतिशत भाग का ही परिरक्षण करना संभंव हो पाता हैं। इस प्रकार ब्रिटेन में प्रतिवर्ष फल व सब्जियों का जितनी मात्रा में उपभोग किया जाता है, भारत में प्रतिवर्ष उतनी ही मात्रा में फल, सब्जियां नष्ट हो जाती हैं। इस कमी को दूर करने का एक कारगार उपाय कृषि मूल्य संवर्धन हैं।

कृषि संवर्धन के लाभ :-

हमारे देश के कृषकों को आर्थिक विकास हेतु कृषि मूल्य संवर्धन कार्य सर्वथा अनुकूल एवं कारगर उपाय है । इसके प्रमुख लाभ निम्नलिखित है :-

1. **अधिक मूल्य की प्राप्ति** – कृषक अपनी उपजों के कुछ भाग को, उनके रंग रूप गुण,स्वाद आदि में परिवर्तन करके ऊंची कीमतो में बेचकर अधिकाधिक लाभ कमा सकते है। जैसे– आलू व केले के चिप्स, विभिन्न प्रकार के पापड़, आचार आदि बनाकर वे बेचे तो उन्हें उसी आलू व केले आदि के लिए कई गुना अधिक मूल्य प्राप्त कर सकते हैं। यदि बाजार में आलू 10 रूपये किलों बिकता है तो चिप्स 20 रूपये का 200 ग्राम बिकता हैं।

2. **मध्यस्थों के स्थान पर कृषकों को लाभ** – वर्तमान व्यवस्था में व्यापारी आदि मध्यस्थ किसानों से उनकी उपजों को सस्ते दामों में खरीदी कर लेते हैं और उनका मूल्य संवर्धन करके उसे ऊंचे दामों में बेचकर लाभ कमाते हैं। मूल्य संवर्धन जब कृषक स्वयं करेंगे तो मध्यस्थों के स्थान पर स्वयं लाभ कमा सकेंगें।

3. **उपजों की बर्बादी पर रोक** – हम सभी जानते हैं कि मौसम में फसल भरपूर प्राप्त होती है तो उसकी कीमत कम प्राप्त होती है साथ ही बहुत से फल सब्जियां आदि सड़ गल जाती हैं। अत: समय पर ही उनका उपयोग कर उपज को बरबादी से बचाया जा सकता हैं।

मूल्य संवर्धन के उपाय -

कृषि उपजों के रंग रूप, गुण आदि में परिवर्तन करके कृ षि मूल्य संवर्धन किया जा सकता है। प्रमुख रूप से कृ षि उपजों से निम्नलिखित सामग्रीं तैयार करके किसान अपने स्तर पर अधिक आय प्राप्त कर सकते हैं–

1. **आटा एवं दलिया बनाना** – गेंहूँ , ज्वार, बाजरा, मक्का आदि की कीमत मूल रूप में जितनी होती है, उसकी तुलना में उससे तैयार उत्पाद जैसे– आटा या दलिया की कीमत अधिक होती है जैसे एक किलोग्राम गेहूं का मूल्य 14 रूपये है तो उसी गेंहूँ से निर्मित दलिया का मूल्य 28रूपये प्रति किलोग्राम एवं आटा 20 रूपये प्रति किलोग्राम बिकता हैं। किसान अपने कुल उत्पादन के कुछ भाग का आटा या दलिया बनाकर बेचकर फसल का मूल्य संवर्धन कर सकता हैं।

2. **बढ़िया, बिजौरे** – उड़द, मूंग, चना आदि दालों से घरेलू स्तर पर बढ़िया बनायी जा सकती है इसी प्रकार तिल या भूरा कुम्हड़ा जो कि खेत में ही उपलब्ध होता है मिलाकर बिजौरे तैयार किये जा सकते हैं। बाजार में ये अधिक कीमत पर मिलते हैं।

3. **पापड़** – कृषि उपजों से प्राप्त विभिन्न प्रकार की दाल, आलू, चावल, ज्वार, मक्का, आदि से विभिन्न प्रकार के पापड़ ,आम से आम के पापड़ तैयार किये जा सकते हैं। इन उत्पादों की कीमत इनके मूल उत्पादों से कई गुना अधिक होती हैं। जिसका लाभ किसान प्राप्त कर सकता हैं।

4. **गुलकंद** – आजकल फूलों की खेती भी की जा रही है। गुलाब ऐसा फूल है जो जल्दी खराब होने लगता है। इसकी पंखुडियों से गुलकंद तैयार कर कृषक इसका लाभ उठा सकते हैं।

5. **माउथ फेशनर** – अदरक, अजबाइन, खजूर, आदि को नीबू के रस एवं मसाला मिलाकर सुखाकर माउथफ्रेशनर आसानी से तैयार कर सकते हैं। साथ ही आंवले को मीठे नमकीन अथवा मसाले मिलाकर पाचक एवं स्वादिष्ट गोलिया तैयार कर सकते है। बाजार में ये उत्पाद अच्छी कीमतों पर बिकते हैं।

6. **मक्खन, घी, पनीर** – कृषि एवं पशुपालन एक ही सिक्के के दो पहलू होते है। अतएव कृषि से आय प्राप्त करने के साथ–साथ कृषक दूध से मक्खन,घी,पनीर आदि तैयार कर लाभ कमा सकते है।

7. **सेवंइयां** – ग्रामीण क्षेत्रों में आंटे से सेवंइयां आसानी से तैयार की जा सकती है और लाभ कमाया जा सकता हैं।

8. **शुष्कन द्वारा मूल्य संवर्धन :**– विभिन्न फल एवं सब्जियां विशेषकर पत्तेदार सब्जियां शीघ्र नाशवान होती है। सूखाकर रखने से इन्हें जहाॅ नष्ट होने से बचाया जा सकता है वहीं इनसे अच्छी आय भी प्राप्त की जा सकती हैं। जैसे मैथी को सुखाकर कसूरी मैथी के रूप में बेचा जाता है। आम की खटाई, अमचूर, आंवले की कलियां कलियों से आंवला पाउडर बनाकर आदि बाजार में ऊंची कीमत पर बिकता हैं। कृषक इसका फायदा स्वयं उठा सकते हैं। इसी प्रकार मिर्च को दही या मसालों में मिलाकर सुखाई गई मिर्च की भी बाजार में काफी मांग हैं।

9. **चिप्स**– आलू, केला, अरबी, शकरकंद, इत्यादि से चिप्स तैयार किए जाते है। आलू जो कि 10 रूपये में एक किलोग्राम है। चिप्स 10 रूपये में 100 ग्राम मिलते हैं।

10. **सॉस, केचप, चटनियां** – खेत में विभिन्न प्रकार की सब्जियां उगायी जाती है जिनसे सॉस, केचप, व विभिन्न प्रकार की चटनियां बनायी जाती है। इनको तैयार करने में लागत बहुत कम आती है। किंतु इनसे अच्छी कीमत प्राप्त होती है। उदाहरणत: टमाटर से सांस, केचप व प्यूरी, मिर्च से चिली सॉस, चटनी, आदि तैयार की जाती हैं।

11. अचार – किसान अपनी उपलब्धता अनुसार फल एवं सब्जियों का अचार जैसे– आम, आंवला, मिर्च, नीबू, जिमीकंद, कटहल, गोभी, मूली, गाजर आदि का मिक्स आचार तैयार करके बेचकर अधिक मुनाफा कमा सकते हैं।

12. जैम जैली मुरब्बे – आजकल जैम जैली व मुरब्बे लोकप्रिय उत्पाद है। इन्हें ग्रामीण स्तर पर भी तैयार करके पर्याप्त लाभ कमाया जा सकता है। जैम मुख्यत: गूदेदार फलों जैसे सेब, पपीता, अमरूद, केला, आम से एवं जैली सेब, अमरूद, आदि से एवं आम आंवला, करौंदा, पपीता, सेब आदि से मुरब्बा तैयार किया जाता हैं।

13. शरबत – यदि नीबू, आम या संतरे आदि की फसल होती है तो कृषक उनका शरबत (स्क्वैश काड्रियल) तैयार कर उपज के नष्ट हो जाने या मिट्टी के मोल बिकने से रोक सकते है और अच्छे लाभ कमा सकते हैं।

कृषि मूल्य संवर्धन हेतु उपायो को क्रियान्वयन करना आवश्यक है। ग्रामीण क्षेत्रों में धन, शिक्षा, प्रशिक्षण, प्रबंधन, आदि को पूरा करके ही कृषकों को कृषि मूल्य संवर्धन हेतु सक्षम बनाया जा सकता हैं। इस हेतु निम्नलिखित सुझाव ध्यान देने योग्य है :-

1. कृषकों को मूल्य संवर्धन संबंधित आवश्यक जानकारी उपलब्ध कराना –विभिन्न कृषक क्या उपज निकाल रहे हैं तथा उनका किस किस प्रकार से मूल्य संवर्धन किया जा सकता है, उसके लिए किन किन वस्तुओं की आवश्यकता होगी और वे वस्तुएं कहां से प्राप्त होगी तथा इसके लिए आवश्यक धन की पूर्ति कहां से होगी इन सब बातों की जानकारी कृषकों को दी जाना चाहिए तब ही कृषक इनकों मूर्तरूप दे सकते हैं। इस उद्‌देश्य की पूर्ति हेतु जगह जगह कृषि मूल्य संवर्धन परामर्श केन्द्रो की स्थापना की जाना चाहिए।

2. आवश्यक प्रशिक्षण की व्यवस्था करना – सॉस, जैम, चिप्स, आदि को तैयार करने हेतु कृषकों को प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। अन्यथा सामग्री के खराब हो जाने की संभावना रहती है। कृषकों द्वारा ये उत्पाद व्यवस्था से तैयार किया जाना चाहिए एवं इनके स्वाद को सुरक्षित रखना जरूरी हो जाता है। जिससे बाजार में लोकप्रिय हो व लोगों का इन पर विश्वास बना रहे।

3. वित्त आपूर्ति – कृषि मूल्य संवर्धन के विभिन्न क्रियान्वयन हेतु पूंजी की आवश्यकता होती है। आवश्यकता की पूर्ति दो रूपों में की जा सकती है पहली ऋण के रूप में तथा दूसरी सहकारी समितियों की स्थापना की जानी चाहिए एवं आर्थिक सहायता हेतु शासन को पहल करना चाहिए।

4. तकनीकी सहायता उपलब्ध कराना– तैयार उत्पाद की पेकिंग, सीलिंग व उत्पाद को ताजा बनाए रखने के लिए तकनीकी सहायता की भी आवश्यकता होती है। अत: समय-समय पर आवश्यकतानुसार समुचित तकनीकी सहायता की व्यवस्था होनी चाहिए।

5. विपणन व्यवस्था एवं प्रचार प्रसार – कोई भी उद्योग उसी दशा मे फल फूल सकता है जब उसकी ब्रिकी भली भांति हो और उत्पादक लाभ कमा सकें। किसान उपज का मूल्य संवर्धन कार्य तो कर सकते है किंतु उनके समुचित विपणन हेतु वे स्वयं को सक्षम नहीं पाते है। अत: सरकार स्वयं अथवा सहकारी समितियों आदि के माध्यम से इनकी ब्रिकी की उचित व्यवस्था कर सकती है साथ ही इसके प्रचार प्रसार हेतु मेले प्रदर्शनियां आदि लगा सकती है। मध्यप्रदेश सरकार इस प्रकार के मेले व प्रदर्शनियों आदि का आयोजन समय समय पर करती रहती है इसे और बढ़ावा देना चाहिए।

इस प्रकार हम देखते है कि कृषि उत्पादों का मूल्य संवर्धन ग्रामीण एवं गांवों के उन्नयन में अत्यधिक सहायक है। यदि शासन उपयुक्त उपाय अपनाता है तो निश्चित रूप से हमारी अर्थव्यस्था को सुदृढ़ बनाने में सहायक होगी।

सूती वस्त्र उद्योग : सूती वस्त्र उद्योग भारत का सर्वाधिक संगठित तथा सबसे महत्वपूर्ण उद्योग है। उत्पादन क्षमता की दृष्टि से इस उद्योग में 1866 मिलें है, जिनमें 82% मिलें निजी स्वामित्व की हैं। 10% मिल सरकारी स्वामित्व में तथा 8% मिल सहकारी स्वामित्व में संचालित हैं।

आधुनिक उद्योग के रूप में सूती वस्त्र का प्रथम कारखाना सन् 1818 में कोलकाता में स्थापित किया गया था किन्तु सफल न हो सका। भारत का आधुनिक प्रथम सफल कारखाना सन् 1851 में मुम्बई में खोला गया जिसके संस्थापक श्री नाना भाई डाबर थे। मुम्बई में इस उद्योग के सर्वप्रथम विकसित होने के कारण मुम्बई को सूती वस्त्र की 'राजधानी' कहा गया जबकि बाद में उद्योग के अहमदाबाद नगर में केन्द्रीकृत होने से उसे भारत के 'मेनचेस्टर' की संज्ञा प्रदान की गई।

सूती वस्त्र उत्पादन में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद तीव्र वृद्धि हुई है देश में सूती वस्त्र उत्पादन 1950-51 में 421.5 करोड़ वर्ग मीटर था, जो 2005-06 में 4957.7 करोड़ वर्ग मीटर हो गया है।

सूती वस्त्र उद्योग का वितरण

सूती वस्त्र उद्योग में कच्चे माल के रूप में कपास का प्रयोग होता है। अत: कपास उत्पादक क्षेत्र इस उद्योग के लिए उपयुक्त हैं। साथ ही आर्द्र जलवायु में भी यह उद्योग सफल होता है। फलत: भारत के अधिकांश क्षेत्र समुद्रतटीय तथा कपास उत्पादक क्षेत्रों में केन्द्रित हैं। प्रमुख उत्पादक राज्य निम्नलिखित है -

- **महाराष्ट्र :** वस्त्र उत्पादन में भारत में महाराष्ट्र प्रथम स्थान पर है, यहाँ सूती वस्त्र की कुल 119 मिलें हैं जिनमें से 101 में कताई और बुनाई दोनों कार्य किए जाते हैं। शेष 18 मिल केवल सूत कताई का कार्य करती हैं। मुम्बई यहाँ का प्रमुख औद्योगिक केन्द्र है। यहाँ 54 सूती वस्त्र मिल हैं। इस राज्य में सूती वस्त्र के अन्य केन्द्र शोलापुर, पुणे, नागपुर, वर्धा, अमरावती, अकोला औरंगाबाद आदि स्थानों पर हैं।

- **गुजरात :** इसका दूसरा स्थान है। यहाँ के 118 मिलों में से 24 कताई-बुनाई की तथा 24 कताई की मिलें हैं। अहमदाबाद इस राज्य का ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण देश का 'सर्वश्रेष्ठ' सूती वस्त्र औद्योगिक केन्द्र है। इस नगर में 69 मिलें है। इस राज्य में अन्य सूती वस्त्र उद्योग के केन्द्र बड़ोदरा, भरूच, सूरत, भावनगर, राजकोट आदि हैं।

- **तमिलनाडु :** सूती वस्त्र उत्पादन में यह राज्य देश में तीसरे स्थान पर है। यहाँ इस उद्योग की छोटी-छोटी मिलें हैं जिनकी संख्या 439 है। अधिकांश मिलें सूत कताई का कार्य करती हैं। इस राज्य में इस उद्योग की स्थापना का श्रेय विद्युत उत्पादन को है। कोयम्बटुर यहाँ का प्रमुख सूती वस्त्र उद्योग केन्द्र है जिसे दक्षिण भारत का 'मैनचेस्टर' कहा जाता है। राज्य में अन्य केन्द्र मदुरई, चेन्नई तिरुन्नवैली, सेलम, पेराम्बूर आदि हैं।

इनके अलावा पश्चिम बंगाल में हावड़ा और श्रीरामपुर प्रमुख केन्द्र हैं। उत्तर प्रदेश में कानपुर राज्य का सबसे बड़ा सूती वस्त्र उद्योग केन्द्र है जिसे उत्तर भारत का 'मैनचेस्टर' कहा जाता है। अन्य केन्द्र वाराणसी, आगरा, हाथरस, मुरादाबाद, रामपुर, लखनऊ आदि हैं। मध्य प्रदेश में प्रमुख सूती वस्त्र उद्योग के केन्द्र ग्वालियर, इन्दौर, उज्जैन, सतना, जबलपुर, भोपाल, रतलाम तथा देवास हैं। कर्नाटक में मैसूर, बेंगलूर, मंगलौर, बल्लारि तथा चित्रदुर्ग हैं। तेलंगाना व आन्ध्रप्रदेश में हैदराबाद, वारंगल, गुण्टूर, सिकन्दराबाद, केरल में कणान्नूर, तिरूवन्तपुरम, अनन्तपुर तथा राजस्थान में जयपुर, किशनगढ़, भीलवाड़ा, अजमेर प्रमुख केंद्र हैं। भारत के प्रमुख सूती वस्त्र उद्योग केन्द्र दिए गए मानचित्र में दर्शित हैं।

❑ खनिज आधारित उद्योग

खनिजों से कच्चा माल प्राप्त करने वाले प्रमुख उद्योगों में लोहा-इस्पात, सीमेन्ट, धातु आदि उद्योग हैं। सम्पूर्ण औद्योगिक संरचना में लोहा-इस्पात उद्योग को 'आधारभूत उद्योग' की संज्ञा प्राप्त है। अत: यहाँ हम विशिष्ट उद्योग

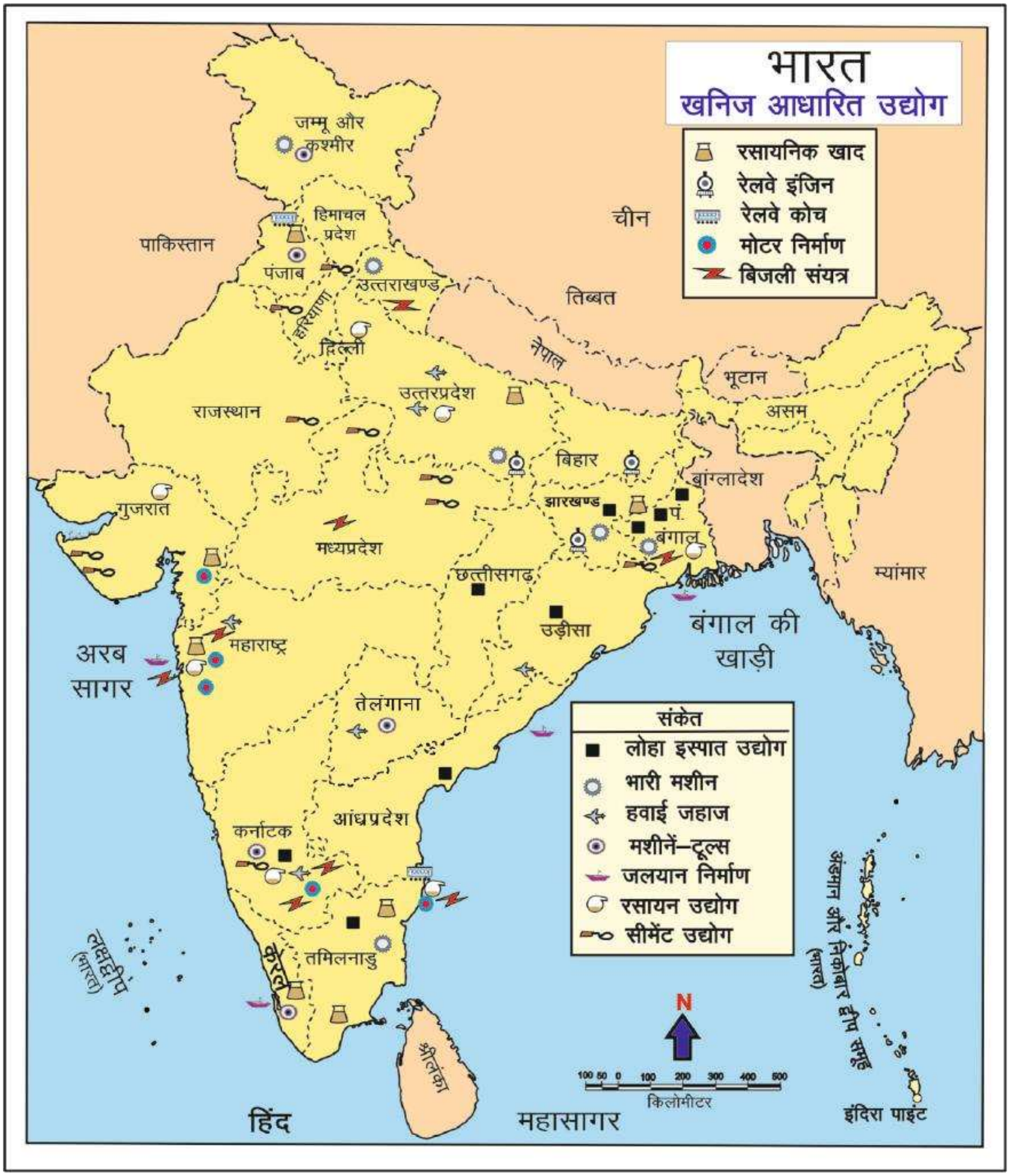

भारत की सीमा रेखा भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र 2014 पर आधारित

के रूप में लोहा–इस्पात उद्योग का अध्ययन करेंगे।

लोहा–इस्पात उद्योग

लोहा–इस्पात आज के उद्योग जगत में भौतिक सभ्यता की रीढ़ है। मानव उपयोग की छोटी से छोटी वस्तु जैसे – सुई, कील, पिन आदि से लेकर बड़ी से बड़ी वस्तुएँ, मोटर, रेल, कल–कारखानों की मशीनें आदि का निर्माण बिना लोहा–इस्पात के संभव नहीं है। अतः यह अत्यन्त महत्पूर्ण उद्योग है जिस पर राष्ट्र का आर्थिक विकास निर्भर करता है।

प्राचीन काल में भारत में यह लघु उद्योग के रूप में था। दिल्ली में कुतुब मीनार के निकट स्थित लगभग 1500 वर्ष पुराना मेहरौली लौह-स्तम्भ, भारत में इस उद्योग की प्राचीनता का स्पष्ट प्रमाण है। आधुनिक स्तर का पहला लोहा-इस्पात कारखाना भारत में सन् 1830 में तमिलनाडु राज्य के पोर्टोनोवो नामक स्थान पर स्थापित किया गया था। बृहद पैमाने का भारत का प्रथम लोहा-इस्पात कारखाना सन 1907 में जमशेद जी टाटा द्वारा झारखंड राज्य के साकची नामक स्थान पर खोला गया। इस स्थान को आज जमशेदपुर कहा जाता है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद सरकार द्वारा विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से इस उद्योग के क्रमबद्ध व तीव्र विकास के प्रयास किये गए। यह उद्योग सार्वजनिक व निजी दोनों ही क्षेत्रों में विकसित हुआ। भारत सरकार ने इस उद्योग में समन्वय स्थापित करने हेतु 'स्टील ऑथोरिटी ऑफ इण्डिया' (SAIL) की स्थापना की गई जो विश्व की सबसे बड़ी औद्योगिक संस्था हैं। यह भारत में लोहा-इस्पात उत्पादन में समन्वय व नियोजन का कार्य करती है।

उद्योग का केन्द्रीकरण : भारत में लोहा-इस्पात उद्योग कच्चे माल के क्षेत्रों में केन्द्रित हैं। कच्चे माल के क्षेत्रों में इस उद्योग की स्थापना का प्रमुख कारण इस उद्योग द्वारा अशुद्ध कच्चे माल का उपयोग करना है। इस उद्योग में, लौह-अयस्क, कोयला, मैंगनीज, चूने का पत्थर तथा डोलोमाइट को प्रमुख कच्चे माल के रूप में प्रयोग किया जाता है। ये सभी पदार्थ वजनी, मूल्य में सस्ते तथा अशुद्धता से भरे होते हैं। इसीलिए ये प्राप्ति स्थान के समीप ही इस्पात कारखानों की स्थापना को आकर्षित करते हैं।

हमारे देश में लोहा-इस्पात उद्योग के केन्द्रीकरण को कच्चे माल के अलावा परिवहन सुविधाओं ने भी प्रभावित किया है। कोयला व लौह-अयस्क की खानों के मध्य रेल सुविधा प्राप्त स्थान इसी कारण इस उद्योग के केन्द्र बने हैं। सस्ते परिवहन के कारण तटीय क्षेत्रों में भी यह उद्योग केन्द्रित है। यह उद्योग मुख्यत: चार क्षेत्रों में केन्द्रित है -

(अ) **कोयला क्षेत्रों में स्थित इस्पात केन्द्र** - बर्नपुर, हीरापुर, कुल्टी, दुर्गापुर तथा बोकारो।

(ब) **लौह-अयस्क क्षेत्रों में स्थित इस्पात केन्द्र** - भिलाई, राउरकेला, भद्रावती, सलेम, विजयनगर और चन्द्रपुर लौह-अयस्क खानों के समीप स्थित है।

(स) **कोयला व लौह-अयस्क के बीच जोड़ने वाले परिवहन सुविधा प्राप्त स्थानों पर स्थित इस्पात केन्द्र** - जमशेदपुर।

(द) **तटीय सुविधा स्थल पर स्थित इस्पात केन्द्र** - विशाखापट्टनम।

जमशेदपुर में स्थापित लोहा-इस्पात का कारखाना 'टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी' (TISCO) के नाम से जाना जाता है। यह भारत का ही नहीं बल्कि एशिया महाद्वीप का सबसे बड़ा इस्पात कारखाना है। इसमें इस्पात के साथ गार्डर, सलाखें, चादर, रेल पटरियाँ तथा काँटेदार तार बनाए जाते हैं।

लोहा इस्पात संयंत्र

	कारखाने का नाम	स्थान	राज्य	विशेष
1.	टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी	जमशेदपुर	झारखण्ड	सबसे बड़ा कारखाना
2.	इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी*	बर्नपुर	पश्चिमी बंगाल	कुल्टी तथा हीरापुर में दो शाखाएँ
3.	विश्वरैश्वरैया आयरन एण्ड स्टील कम्पनी	भद्रावती	कर्नाटक	-
4.	हिन्दुस्तान स्टील लिमिटेड	राउरकेला	उड़ीसा	जर्मनी की सहायता से बना

5.	भिलाई-इस्पात कारखाना	भिलाई (दुर्ग)	छत्तीसगढ़	रूसी विशेषज्ञों के सहयोग से बनाया गया
6.	दुर्गापुर इस्पात कारखाना	दुर्गापुर	पश्चिमी बंगाल	ब्रिटेन के सहयोग से स्थापित
7.	लोहा-इस्पात कारखाना	सलेम	तमिलनाडु	-
8.	विशाखापट्टनम इस्पात कारखाना	विशाखापट्टनम	आन्ध्रप्रदेश	केन्द्र व राज्य का संयुक्त उपक्रम
9.	बोकारो इस्पात कारखाना	बोकारो	झारखण्ड	आधुनिकतम तथा इसकी आर.सी.सी. चिमनी एशिया में सबसे ऊँची
10.	विजयनगर इस्पात कारखाना	हास्पेट	कर्नाटक	पूर्णतः भारतीय तकनीकि पर आधारित

* इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी में हीरापुर, कुल्टी और बर्नपुर के कारखाने समाहित हैं।

लोहा-इस्पात का उत्पादन - स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत के लोहा-इस्पात उद्योग के व्यवस्थित विकास से उत्पादन में निरन्तर प्रगति हुई है। पिछले कुछ दशकों में उत्पादन में तीव्र वृद्धि हुई है, 1970-71 में 70 लाख टन से बढ़कर 2005-06 में 492 लाख टन हो गया।

इस्पात उत्पादन की दृष्टि से भारत का विश्व में नौवां स्थान है। इस उद्योग से भारत में 5 लाख से अधिक मनुष्य प्रत्यक्षतः रोजगार प्राप्त कर रहे हैं।

❑ वन आधारित उद्योग

वन प्रकृति की अमूल्य देन हैं, जिनसे हमें लकड़ी, लाख, गोंद, राल, छाल, पत्तियाँ, फल एवं औषधियाँ आदि अनेक वस्तुएँ प्राप्त होती हैं। वनों से प्राप्त इस सामग्री से कई उद्योगों को कच्चा माल मिलता है। कागज, फर्नीचर, माचिस, रबड़, रेशम आदि उद्योग वन आधारित हैं। यहाँ वन आधारित विशिष्ट उद्योग के रूप में कागज उद्योग का विवरण दिया गया है।

मध्यप्रदेश की प्रमुख वनोपज एवं लघु व कुटीर उद्योग

हमारे मध्यप्रदेश में विभिन्न प्रकार की मूल्यवान वनोपज प्राप्त होती हैं जिससे राज्य सरकार को प्रतिवर्ष करोड़ों रूपए की आय प्राप्त होती हैं। राज्य सरकार ने कई योजनाएं चलाई हैं। इनमें अधिकांश वनोपज का संग्रहण करवा कर सरकार उसका उपयोग करती है। वनवासियों के विकास के लिए यह आवश्यक है कि कुछ उपजों का उपयोग कुटीर व लघु उद्योगों को स्थानीय स्तर पर स्थापित करने व संचालन करने में किया जाए। इस प्रकार वहां के निवासियों की आर्थिक व सामाजिक उन्नति हो सकेगी। प्रमुख रूप से निम्नलिखित वे वनोपज है जिसका उपयोग कच्चे माल के रूप में करके स्थानीय तौर पर कुटीर व लघु उद्योगों की स्थापना की जा सकती है।

लघु एवं कुटीर उद्योग भी अर्थव्यवस्था के विकास का आधार होते हैं। कुछ उद्योग कृषि एवं वनोपज पर आधारित होते हैं। इन उद्योगों को कच्चे माल की आपूर्ति कृषि उपज एवं वनोपज के रूप में प्राप्त होती है। वन संपदा की दृष्टि से मध्यप्रदेश एक संपन्न राज्य है मध्यप्रदेश के कुल क्षेत्रफल का लगभग 30.74 प्रतिशत भाग वनोपज से आच्छादित है। राज्य के वनों में फैली हुई वनीय संपदा को दो समूहों में बांटा गया है। प्रधान वनोपज- जैसे-सागौन, साल, बाँस, तेंदूपत्ता तथा गौण वनोपज जैसे-खैर, हर्रा, बहेड़ा, आंवला, लाख, गोंद, भिलावा,

अचार (चिरौंजी), महुआ आदि।

वनों में रहने वाले हमारे वनवासियों एवं गांवों में रहने वाले ग्रामीणों के क्षेत्र में उद्योग धंधों की कमी है। इस कमी को वनोपज आधारित लघु एवं कुटीर उद्योगों को प्रारंभ कर दूर किया जा सकता है। इसके परिणाम स्वरूप इन क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों में वृद्धि होगी और लोगों की आय व जीवन स्तर में वृद्धि हो सकेगी। तब ही भारतपूर्ण रूप से खुशहाल एवं संपन्न देश कहला सकेगा।

बाँस- प्राचीनकाल से हमारे देश में बाँस का उपयोग घर बनाने में होता आया है। इसके अतिरिक्त बाँस का उपयोग कुटीर उद्योगों के रूप में भी किया जाता है। चटाई बनाने, टोकरी सूपा, शो पीसेस, गमला स्टेंड, चम्मच स्टेंड, लैंपशेड जैसी कई प्रकार की वस्तुओं का निर्माण कार्य कुटीर एवं लघु उद्योग स्थापित करके किया जाता है। आवश्यकता है उसका थोड़ा आधुनिकीकरण किया जाए तथा बाँस उत्पादक क्षेत्र जैसे बालाघाट, सिवनी, मण्डला, सागर, भोपाल आदि में इनके विभिन्न प्रकार के निर्माण कार्य हेतु अलग-2 लघु कारखाने या उद्योग लगाए जाएं।

महुआ - मध्यप्रदेश के जंगलों में महुआ बहुतायत से पाया जाता है। आदिवासी स्त्रियाँ व बच्चे महुआ के मौसम में (सामान्यत: मार्च, अप्रैल माह में) सुबह सुबह जंगलों में गीत गाते हुए जाते हैं और इन्हें बीनकर लाते हैं और सुखाकर बेचते हैं। महुआ का फूल व फल जिसे गुल्ली कहते हैं दोनों का उपयोग किया जाता है। फूल को सुखाकर तथा गुल्ली से तेल निकाला जाता है, मजे की बात यह है कि तेल निकालने के बाद बचा हुआ अवशिष्ट पदार्थ भी बहुत उपयोगी होता है।

आंवला- मध्यप्रदेश के वनों में आंवला के वृक्ष बहुतायत से पाए जाते हैं। हम सभी जानते हैं कि आंवला विटामिन सी का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। इसके उत्पाद कुटीर उद्योग, लघु उद्योग के माध्यम से तैयार किए जा सकते हैं। आंवले को सुखा कर, सूखा आंवला, आंवले का चूर्ण, मुख शुद्धि के रूप में नमक व मसाले के साथ सुखाकर, पाचक गोलियां बनाकर, अचार बनाकर व्यापार किया जा सकता है। यह आय व रोजगार को बढ़ाने का आसान तरीका है।

हर्रा - हर्रा का उपयोग दवाई बनाने एवं चर्मशोधक के रूप में किया जाता है। राज्य सरकार सहकारी समितियों के माध्यम से इसका संग्रहण करवाती है। संग्रहण के साथ-साथ उपज का कुछ भाग संग्रहणकर्ताओं के द्वारा स्वयं सीधे उपभोक्ताओं को बेचकर आय कमाने के लिए भी रहने देना चाहिए ताकि वे अपने कुटीर या लघु उद्योंग में उसका उपयोग कर सकें।

बहेड़ा - मध्यप्रदेश में बहेडा एक प्रमुख वनोपज है। हर्रा बहेड़ा एवं आंवला का उपयोग करके बड़ी कंपनियाँ त्रिफलाचूर्ण तैयार करके खूब कमाई करती हैं। यदि उपयुक्त प्रशिक्षण दिया जाए व सुविधाएं उपलब्ध कराई जाए तो स्थानीय स्तर पर भी त्रिफलाचूर्ण तैयार किया जा सकता है।

रीठा शिकाकाई - हमारे राज्य में वनों में रीठा व शिकाकाई भी बहुतायत से उपजती है। आँवला, रीठा व शिकाकाई को सुखाकर सिर धोने हेतु प्राकृतिक पावडर तैयार करने हेतु उद्योग चलाए जा सकते हैं।

लाख - लाख मुख्यत: पलाश, कुसुम, बेर आदि वृक्षों पर रहता है तथा इस कीट से लाख प्राप्त होता है। लाख का उपयोग, खिलौने, चूड़ियाँ, चपड़ी आदि बनाने में किया जाता है। प्रदेश में लाख बनाने का शासकीय कारखाना उमरिया में है। मंडला जबलपुर, सिवनी, होशंगाबाद आदि वनों में लाख का मुख्य रूप से संग्रह होता है। अत: अवश्यकता है कि इन क्षेत्रों में भी छोटे-छोटे लघु उद्योग लगाए जाएं ताकि यहां के निवासियों को भी अच्छा रोजगार प्राप्त हो सकें।

भिलमा या भिलावा- भिलमा या भिलावा एक प्रकार का जंगली फल है। जो पकने पर कुछ मीठा

व खाने योग्य होता है। इसके बीज का उपयोग स्याही बनाने व पेंट बनाने के काम में आता है। छिंदवाड़ा जिले में इसका एक कारखाना भी है। इसके बीज चिरौंजी आदि में रखने से कीड़ों से बचाव किया जा सकता है। इसके कुटीर उद्योग वनवासी क्षेत्र में स्थापित करना चाहिए।

प्रदेश के वनों में कई प्रकार की घास भी उत्पन्न होती है। रक्षाघास व खाबई बांसों के वार्षिक ठेके दिए जाते हैं। रक्षा घास का उपयोग गेस्टलस तेल के लिए तथा खाबई घास का उपयोग रस्सियों के लिए किया जाता है। वार्षिक ठेके देने से लाभ ठेकेदारों को ही मिलता है, यदि गेस्टलस तेल व रस्सी बनाने के लिए लघु उद्योग स्थापित किए जाएं तो इसका लाभ वनवासियों को मिल सकेगा।

शहद :- वनों में मधुमक्खियों के छत्ते बहुत लगते हैं। वनवासी आदिवासी इनमें शहद निकालकर बेचने का कार्य करते हैं किंतु उन्हें पर्याप्त लाभ प्राप्त नहीं होता है। यदि इसे एक संगठित कुटीर या लघु उद्योग के स्तर पर चलाया जाता है तो जहां लोगों को अच्छी गुणवत्ता वाला शहद प्राप्त होगा वहीं दूसरी ओर शहद से वनवासियों को आय का अच्छा स्रोत प्राप्त हो सकेगा।

गोंद :- गोंद एक महत्वपूर्ण वनोपज है। मध्यप्रदेश में तीन प्रकार की गोंद पाई जाती है। (i)बबूल की गोंद जो संपूर्ण मध्यप्रदेश में पाई जाती है। यह खाने योग्य एवं गोंद है अधिकांशतः मिठाई बनाने के काम आता है। (ii) कुल्लू गोंद जिसका काफी एवं पेस्टी बनाने के लिए विदेशों को निर्यात किया जाता है। (iii) सलाई गोंद जो संपूर्ण मध्यप्रदेश के चट्टानी क्षेत्रों में पाई जाती है। और इसका उपयोग सुगंध, पेंट तथा वार्निश आदि में किया जाता है। इस प्रकार गोंद से पर्याप्त देशी एवं विदेशी मुद्रा की कमाई होती है, किंतु इस वनोपज पर आधारित ऐसे कोई कुटीर उद्योग नहीं चलाए जाते हैं, जिनका लाभ स्थानीय लोगों को प्राप्त हो सके।

चिरौंजी : - मध्यप्रदेश के जंगलों में अचार के बड़े-बड़े पेड़ बहुतायत से पाए जाते हैं। अचार के छोटे-छोटे फल होते हैं। जिसके भीतर की गुठली से नरम बीज निकाला जाता है उसे ही चिरौजी कहा जाता है। इसका उपयोग मेवे के रूप में किया जाता है और इसको मिठाइयों में डाला जाता है। सरकार इसके संग्रहण हेतु वार्षिक ठेके देती है।

सरकारी प्रयास :-

मध्यप्रदेश राज्य लघु वनोपज व्यापार एवं विकास सहकारी संघ - इस संघ का गठन 1984 में एक सहकारी संस्था के रूप में किया गया। इसके नीचे क्षेत्रीय स्तर पर जिला वनोपज सहकारी संघ एवं सबसे नीचे तृतीय स्तर पर प्राथमिक वनोपज सहकारी समितियां गठित की गई है। इन समितियों के माध्यम से राष्ट्रीयकृत लघुवनोपज समितियां गठित की गई हैं। इन समितियों के माध्यम से राष्ट्रीयकृत वनोपज यथा तेंदूपत्ता, हर्रा ,सालबीज एवं गोंद का संग्रहण किया जाता है।

वर्तमान में वनोपजों का सरकार संग्रहण हेतु ठेके देती है। संग्रहण का कार्य प्रमुख रूप से आदिवासी ही करते हैं। इससे वनवासी आदिवासी क्षेत्र के लोगों को पर्याप्त आय की प्राप्ति नहीं हो पाती है। अतः इन क्षेत्रों में कुटीर उद्योग एवं लघु उद्योग की स्थापना करने हेतु कुछ प्रयास अनिवार्य हैं। यहां कुछ सुझाव प्रस्तुत है-

1. **वित्तीय की सुविधा-** उद्योग कोई सा भी लगाया जाए कम या अधिक मात्रा में पूंजी की आवश्यकता होती है। आदिवासी एव ं वनवासियों को इसकी बहुत अधिक कमी होती है। अतः प्राथमिक सहकारी समितियों के माध्यम से ऋण आपूर्ति की व्यवस्था उद्योग स्थापना के लिए आर्थिक सहायता से की जाना चाहिए।

2. **कार्यस्थल की व्यवस्था :-** उद्योग चलाने के लिए उपयुक्त कार्यस्थल की व्यवस्था वनवासी स्वयं नहीं कर सकते अतः इसकी व्यवस्था भी सहकारी समितियों व शासन द्वारा आर्थिक सहायता से की जाना चाहिए।

3. **तकनीकी सहायता-** इसी प्रकार अच्छे उत्पादन हेतु तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता भी होती है।

अत: क्षेत्रीय उद्योग की आवश्यकता को देखते हुए तकनीशियनों की सुविधा उपलब्ध कराई जाना चाहिए।

4. विपणन की व्यवस्था – वनोपज आधारित कुटीर एवं लघु उद्योग उसी शर्त पर सफल हो सकते हैं, जबकि उनके उत्पादों की बिक्री की उचित व्यवस्था हो। माल के बिकने से ही आय की प्राप्ति होगी। राज्य सरकार इस हेतु मेले एवं प्रदर्शनियों का आयोजन करती है। किंतु इससे वर्ष भर की बिक्री की व्यवस्था नहीं हो पाती अत: मेले एवं प्रदर्शनियों के साथ-साथ इनके सहकारी बिकी स्टोर्स आदि की व्यवस्था भी होना चाहिए।

5. विज्ञापन की व्यवस्था– आज का युग विज्ञापनों का युग है। हर उत्पाद की विक्री विज्ञापनों के माध्यम से ही होती है। जितना बड़ा उत्पादक होता है वह उतना ही अधिक विज्ञापनों पर खर्च करता है। विज्ञापनों से जहां उत्पादों तथा उनकी विशेषताओं की जानकारी लोगों को प्राप्त होती है वहीं आकर्षक विज्ञापनक्रेताओं की संख्या बढ़ाने में सहायक होते हैं। हमारे कुटीर व लघु उद्योग चलाने वाले उत्पादकों के पास इतने संसाधन नहीं होते कि वे विज्ञापन पर खर्च कर सकें। अत: यह दायित्व भी प्रशासन का होता है कि वे इनका प्रचार प्रसार करवाए। सरकार का मेले, प्रदर्शिनियों का आयोजन करने का यह एक प्रमुख उद्देश्य होता है।

हम जानते हैं कि मध्यप्रदेश वन संपन्न प्रदेश है। हम यह भी जान गए हैं कि हमारा राज्य प्रधान व गौण दोनो प्रकार के वनोपज की दृष्टि से संपन्न है जिनका उपयोग करके वनवासियों की अधिक आर्थिक स्थिति व जीवन स्तर में सुधार लाया जा सकता है।

कागज उद्योग – कागज उद्योग आधुनिक सभ्यता का मूलाधार है। अत: वन आधारित उद्योगों में कागज को सर्वाधिक महत्वपूर्ण उद्योग माना जाता है। भारत में हाथ से कागज बनाने की कला का विकास 8 वीं शताब्दी में हुआ। ब्रिटिश शासन से पूर्व हमारे देश में यह कुटीर उद्योग के रूप में था; कालपी और मथुरा इसके प्रमुख केन्द्र थे। भारत का प्रथम आधुनिक सफल कारखाना सन 1716 में तमिलनाडु राज्य के ट्रंकुबार नामक स्थान पर स्थापित हुआ। स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय तक देश में 100 से अधिक कागज मिलें लग गईं थीं।

कागज बाँस, निफर लकड़ी तथा घास से लुग्दी बनाकर तैयार किया जाता है। इसके निर्माण के लिए रंग तथा सरेस को भी प्रयोग में लाया जाता है। भारत में लुग्दी बनाने योग्य लकड़ी कम मिलने के कारण हमें लुग्दी का आयात भी करना पड़ता है। वर्तमान में कपड़े के चिथड़े, जूट, गन्ने की छाल को भी कागज उद्योग में कच्चे माल के रूप में प्रयोग किया जाता है। भारतीय कागज उद्योग में प्रयोग होने वाले कच्चे माल निम्नलिखित हैं–

- वनों से प्राप्त कच्चा माल — 53%
- कृषि उपजों से मिलने वाला कच्चा माल — 23%
- रद्दी कागज — 15%
- अन्य प्रकार का कच्चा माल — 9%

उद्योग का केन्द्रीकरण – औसतन 1 टन कागज बनाने के लिए 2.38 टन बाँस की आवश्यकता पड़ती है। अत: भारत में इस उद्योग का केन्द्रीकरण कच्चे माल प्राप्ति स्थलों के निकटवर्ती ऐसे भागों में हुआ है जहाँ उद्योग स्थापना हेतु अन्य आवश्यक भौगोलिक कारक यथा– समतल धरातल, परिवहन के साधन, कुशल श्रम व शक्ति के साधन उपलब्ध हैं। भारत के प्रमुख कागज उत्पादन केन्द्र मानचित्र में प्रदर्शित हैं।

देश के कागज उत्पादक राज्यों में कर्नाटक, केरल, बिहार, झारखण्ड आदि प्रमुख हैं। मध्य प्रदेश के होशंगाबाद में नोट छापने के कागज का कारखाना स्थापित है।

कागज का उत्पादन – भारत का कागज उत्पादन की दृष्टि से विश्व में 20 वाँ स्थान है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश के कागज उत्पादन में तीस गुनी से भी अधिक वृद्धि हुई है। हमारे देश में उत्पादित होने वाले कागज

में 53% लिखने और छपाई का कागज, 22% पेकिंग करने का कागज, 16% गत्ता 6% अखबारी कागज तथा शेष अन्य विशेष किस्म का कागज है। देश में सभी प्रकार के कागज व गत्ते का उत्पादन 1950-51 में 116 हजार टन था जो 2000-01 में बड़कर 3090 हजार टन हो गया।

कागज का उत्पादन

क्र.	राज्य	प्रमुख उत्पादक केन्द्र	राष्ट्रीय उत्पादन का प्रतिशत
1.	पश्चिम बंगाल	टीटागढ़, रानीगढ़, नैहाटी, कोलकाता, कॉँकिनाडा, बड़ानगर, शिवराफूली आदि	40%
2.	आन्ध्र प्रदेश	सिरपुर, राजमहेन्द्री, कागजनगर, हासपेट आदि	12%
3.	महाराष्ट्र	पूना, मुम्बई, बल्लारपुर, कोलाबा, कामटी, कल्याण, वाड़ावली, ओंगेलवाड़ी आदि	11%
4.	उड़ीसा	ब्रिजराजनगर, चौद्वार, रायगढ़ आदि	11%
5.	मध्य प्रदेश	इन्दौर, भोपाल, सीहोर, नेपानगर, होशंगाबाद आदि	10% से कम
6.	हरियाणा	फरीदाबाद, यमुनानगर, चण्ड़ीगढ़ आदि	10% से कम
7.	तमिलनाडु	पल्लीपलायम, चरनमहादेवी, उदमलवेट आदि	10% से कम
8.	उत्तर प्रदेश	सहारनपुर, लखनऊ, मेरठ, पिपराइच, मोदीनगर आदि	5% से कम
9.	गुजरात	बड़ोदरा, पिलोमोरिया, राजकोट, उटूरन, उदावाड़ा, वरजोद, गोंडल आदि	5% से कम

वर्तमान में देश में 600 से अधिक कागज व गत्ता मिल हैं जिनमें लगभग 3 लाख लोग प्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्राप्त कर रहे हैं। हमारे देश में कागज उत्पादन की तुलना में कागज की माँग बहुत अधिक बढ़ी है। अतः इस उद्योग में तीव्र विकास अपेक्षित है।

3.3 उद्योगों का राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में योगदान

औद्योगिक आयोग के अनुसार ईसा से पूर्व भी भारत एक औद्योगिक देश था। भारत में निर्मित, मलमल, रेशमी कपड़ा, आभूषण आदि विदेशों को निर्यात किए जाते थे, परन्तु 18 वीं शताब्दी के मध्य में यूरोप में हुई औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप यहाँ के परम्परागत कुटीर उद्योग को भारी क्षति हुई। भारत की राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में उद्योगों का स्थान धीरे-धीरे सीमित होता गया और भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान हो गई।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद देश के आर्थिक विकास हेतु औद्योगिक विकास की आवश्यकता को महसूस किया गया। सन् 1950 में 'राष्ट्रीय योजना आयोग' की स्थापना हुई। पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से भारत के औद्योगिक विकास हेतु चरण बद्ध लक्ष्य तक किए गए। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में उद्योगों के बढ़ते योगदान से निम्नांकित उद्देश्यों की पूर्ति संभव हुई -

1. उद्योगों से उत्पादन में वृद्धि होती है जिससे प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होती है और जीवन-स्तर उन्नत होता है।
2. रोजगार के साधनों में वृद्धि होती है तथा मानव संसाधन पुष्ट होते हैं।

3. राष्ट्रीय आय में वृद्धि तथा पूँजी का निर्माण होता है।

4. उद्योगों के बढ़ते योगदान से अर्थव्यस्था के अन्य खण्ड–कृषि, खनिज, परिवहन आदि में प्रगति होती हैं।

5. अनुसंधानों को बल मिलता है तथा तकनीकी विकसित होती है।

भारत में सकल घरेलू उत्पाद में विभिन्न उत्पादक क्षेत्रों की वृद्धि दर निम्न प्रकार से हुई –

क्षेत्रवार सकल घरेलू उत्पाद की वास्तविक वृद्धि दरें (साधन लागत पर) प्रतिशत में

उत्पादन क्षेत्र	2001-02	2002-03	2003-04	2004-05	2005-06
1. कृषि एवं सम्बद्ध	6.2	6.9	10.0	0.7	2.3
2. उद्योग	2.7	7.0	7.6	8.6	9.0
3. सेवाएँ	7.1	7.3	8.2	9.9	9.8
सकल घरेलू उत्पाद	**5.8**	**3.8**	**8.5**	**7.5**	**8.1**

उपर्युक्त सारणी से यह ज्ञात होता है कि भारतीय अर्थव्यवस्था में औद्योगिक उत्पाद वृद्धि में निरंतरता है, जो कि उद्योगों के अर्थव्यवस्था में बढ़ते महत्व की परिचायक है।

राष्ट्रीय आर्थिक विकास हेतु उद्योगों का विकास करने की आवश्यकता है। अर्थव्यवस्था में उद्योगों की अधिकाधिक सहभागिता ही राष्ट्र के निवासियों को चहुमुखी विकास प्रदान कर सकती है।

3.4 औद्योगिक प्रदूषण

वायु, जल और भूमि में किसी भौतिक, रासायनिक अथवा जैविक अनचाहे परिवर्तन से, जिससे प्राणी मात्र का स्वास्थ्य, सुरक्षा और कल्याण को प्रभावी तौर से हानि पहुँचती हो तो उसे प्रदूषण कहते हैं।

मनुष्य ने अपनी मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए औद्योगिक कारखानों की स्थापना की। औद्योगिक प्रगति ने अर्थव्यस्था को विकसित व उन्नत बनाने में जहाँ अपना महत्वपूर्ण सहयोग दिया वहीं दूसरी ओर पर्यावरण संबंधी ऐसी कठिनाइयों को जन्म दिया जो आज विकराल रूप से हमारे समक्ष खड़ी हैं। आज पर्यावरणविद् इस बात का अनुभव कर रहे हैं कि औद्योगिक इकाइयों से निकलने वाला कचरा, दूषित जल, विषैली गैस आदि सम्पूर्ण पर्यावरण को प्रदूषित कर रही हैं, पारिस्थितिकी तन्त्र का संतुलन बिगड़ रहा है तथा प्रदूषण की स्थिति संकट बिंदु तक पहुँच गई है, जिससे पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व के लिए खतरा पैदा हो गया है। औद्योगीकरण से होने वाले प्रमुख प्रदूषण निम्नालिखित हैं –

1. वायु प्रदूषण (Air Pollution)
2. जल–प्रदूषण (Water Pollution)
3. भूमि प्रदूषण (Land Pollution)
4. ध्वनि प्रदूषण (Noise Pollution)

उद्योगों के अतिरिक्त पर्यावरण प्रदूषण के, अन्य कई घटक भी हैं किन्तु हम यहाँ प्रदूषण में केवल औद्योगीकरण की भूमिका का ही अध्ययन करेंगे –

वायु प्रदूषण – कारखानों से निकलने वाली हानिकारक गैसें व धुँआ वायु प्रदूषण का प्रमुख कारण है। विभिन्न उद्योगों से होने वाले प्रदूषण की मात्रा एवं प्रकृति, उद्योग के प्रकार, प्रयुक्त होने वाले कच्चे माल एवं निर्माण आदि पर निर्भर करती है। इस दृष्टि से कपड़ा उद्योग, रासायनिक उद्योग, धातु उद्योग, तेल शोधक एवं चीनी उद्योग

अन्य उद्योगों की अपेक्षा अधिक प्रदूषण फैलाते हैं। इन उद्योगों से वायु मण्डल में, कार्बनडाइ ऑक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड, धूल आदि हानिकारक व विषैले तत्व मिल जाते हैं जो वायु को प्रदूषित करते हैं।

जल प्रदूषण – जल जीवन का आधार है। जल में अवांछित तत्वों का मिश्रण जल को प्रदूषित कर देता है। औद्योगिक उत्पादन हेतु कारखानों में जल का उपयोग किया जाता है। औद्योगिक प्रक्रिया के दौरान जल में अनेक हानिकारक पदार्थ, लवण, अम्ल, रसायन तथा गैसें घुल मिल जाती है। उद्योगों से निकला हुआ यह जल जलाशयों अथवा नदियों में जाकर मिलता है। इस जल का उपयोग या सम्पर्क प्राणियों और वनस्पतियों के लिए घातक होता है। औद्योगिक अपशिष्टों के सागरों व महासागरों में डालने से समुद्री जल भी प्रदूषित हो जाता है।

भूमि प्रदूषण – भूमि एक सीमित संसाधन है। इसके दुरूपयोग के परिणाम भयंकर हो सकते हैं। औद्योगिक अपशिष्ट का भूतल पर फैलाव भूमि प्रदूषण का कारण बनता है। इस प्रकार के अपशिष्ट में अनेक ऐसे पदार्थ होते हैं जो प्राकृतिक रूप में घटित नहीं होते तथा इनका प्रकृति में पुनः चक्रीकरण नहीं होता जिससे भूमि की गुणवत्ता में कमी आती है, इसे भूमि प्रदूषण कहते हैं। औद्योगिक कचरे में रासायनिक दुर्गन्धियुक्त, ज्वलनशील विषैले पदार्थ पर्यावरण को क्षति पहुँचाते हैं। भूमि प्रदूषण को 'मृदा प्रदूषण' भी कहते हैं।

ध्वनि प्रदूषण – वातावरण में ऐसी कोई भी ध्वनि जो कानों को प्रिय न लगे, मानसिक क्रियाओं में बाधा डाले अर्थात् 'शोर' ही ध्वनि प्रदूषण का मुख्य रूप है। उद्योगों में अनेक प्रकार की मशीनें प्रयोग की जाती है जिनसे निरन्तर शोर होता रहता है। इसके अतिरिक्त कारखानों में जेनरेटर भी चलाए जाते हैं, इन सभी से निरन्तर और अधिक शोर होता है। इससे इनमें कार्य करने वाले श्रमिक अनेक मानसिक रोगों तथा बहरेपन के शिकार हो जाते हैं।

प्रदूषण का मानव जीवन पर प्रभाव

प्रदूषित वातावरण सम्पूर्ण पारिस्थतिकी तन्त्र को क्षति पहुँचाता है। मानव जीवन पर इसके मुख्य दुष्प्रभाव निम्नांकित हैं –

1. प्रदूषित वायु, मानव की श्वसन क्रिया को क्षति पहुँचाती है। इससे दमा, निमोनिया, गले में दर्द, खाँसी के साथ ही कैंसर, मधुमेह और हृदय रोग जैसे घातक रोग होते हैं तथा हानिकारक गैसों का वायुमण्डल में अधिक मिश्रण भीषण हादसों को जन्म देता है, जिससे मनुष्य मौत के शिकार हो जाते है। भोपाल गैस त्रासदी इसी प्रकार की औद्योगिक गैस रिसाव का परिणाम थी।
2. प्रदूषित पेय जल, अनेक रोगों के कीटाणु, विषाणु मनुष्य के शरीर में पहुँचाकर रोगों को उत्पन्न कर देता है। प्रदूषित जल के सेवन से पेचिश, हैजा, अतिसार, टायफाइड, चर्मरोग, खाँसी, जुकाम, लकवा, अन्धापन, पीलिया व पेट के रोग हो जाते हैं।
3. गंदगी के क्षेत्रों एवं प्रदूषित चीजों पर मक्खी, मच्छर, कीड़े आदि पनपते है। गन्दगी युक्त वातावरण में अनेक कीटाणु पैदा होते है जो मनुष्य के लिए पेचिश, तपेदिक, हैजा, आंतों के रोग, आँखों में जलन आदि रोगों हेतु उत्तरदायी होते हैं।
4. ध्वनि प्रदूषण का सर्वाधिक प्रभाव सुनने की शक्ति पर पड़ता है। अत्यधिक शोर से व्यक्ति बहरा हो जाता है। इसके अतिरिक्त इससे रक्तचाप, हृदयरोग, सिरदर्द, घबराहट आदि रोग भी मनुष्य में पनप जाते है।

उद्योगीकरण से बढ़ते प्रदूषण और वायुमण्डल में बिखरती कार्बन डाई ऑक्साइड और कार्बन मोनो ऑक्साइड

से 'ग्रीन हाउस' प्रभाव का जन्म हुआ है। सूर्य की गर्मी के वायुमण्डल में कैद हो जाने से धरती के औसत ताप में वृद्धि हो रही है जिससे भूतापन (ग्लोबल वार्मिंग) होने लगी है। इसके दुष्परिणामों को पृथ्वी पर होने वाले महाप्रलय के रूप में आँका जा रहा है।

3.5 प्रदूषण नियन्त्रण के उपाय

पर्यावरण प्रदूषण से उत्पन्न समस्याओं से पर्यावरणविद् भविष्य में आने वाले संकटों की आशंका व्यक्त कर रहे हैं। प्रदूषण पर नियन्त्रण किस प्रकार हो यह प्रत्येक सजग नागरिक के चिन्तन का विषय हो गया है। पर्यावरण प्रदूषण के अनेक कारक हैं जिनमें औद्योगीकरण सबसे प्रमुख है। अतः हम यहाँ औद्योगिक प्रदूषण को नियंत्रित करने के उपायों का अध्ययन करेंगे। औद्योगिक प्रदूषण के नियन्त्रण हेतु निम्नांकित उपाय किया जाना आवश्यक है –

वायु प्रदूषण नियंत्रण के उपाय

- कल कारखानों की चिमनियों की ऊँचाई बढ़ाकर उनसे निकलने वाली हानिकारक गैसों के प्रभाव को कम किया जा सकता है।
- उद्योगों में कम प्रदूषण करने वाली प्रोद्यौगिकी को अपनाया जाना चाहिए।
- उद्योगों में प्रदूषण नियंत्रक उपकरण लगाए जाने चाहिए।
- कारखाने की स्थापना से पूर्व ही प्रदूषण अनुमान लगाकर उसको नियंत्रित करने के साधन जैसे वनस्पति आवरण आदि कारखाना परिसर में विकसित किया जाना चाहिए।
- कारखानों में कम से कम प्रदूषण करने वाले ऊर्जा संसाधनों का उपयोग होना चाहिए, जैसे – सौर ऊर्जा।

जल प्रदूषण नियंत्रण के उपाय

- रासायनिक उद्योग जो कि जल को सर्वाधिक प्रदूषित करते हैं, को जलाशयों व नदियों से दूर स्थापित किया जाना चाहिए।
- उद्योगों में प्रयोग किए गए जल को जलाशय व नदियों में सीधे विसर्जित नहीं करना चाहिए। बल्कि इस जल का उपचार कर इसे सिंचाई के उपयोग में लाना चाहिए।
- उद्योगों में प्रयोग किए गए जल के उपचार की व्यवस्था कारखाने की स्थापना के साथ ही की जानी चाहिए।
- सड़क के किनारे तथा कारखानों के निकट खाली स्थानों पर वृक्ष लगाए जाने चाहिए।
- उद्योग संचालकों को जल प्रदूषण नियंत्रण परामर्श नियमित दिए जाने चाहिए तथा उद्योगों से विसर्जित जल की प्रशासनिक निगरानी होनी चाहिए।

भू-प्रदूषण नियंत्रण के उपाय

- औद्योगिक अपशिष्टों के निक्षेपण की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। अपशिष्ट निक्षेपण खुले स्थानों में नहीं होना चाहिए।
- अपशिष्टों को आधुनिक तकनीक से जलाकर उससे उत्पन्न ताप को ऊर्जा के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। इससे अपशिष्ट का लगभग 80% भाग नष्ट हो जाता है तथा अपशिष्ट के जलने से उत्पन्न वायु प्रदूषण को भी नियन्त्रित किया जा सकता है।
- अपशिष्ट से कम्पोस्ट खाद बनाकर उसे उपयोगी बनाया जा सकता है।
- औद्योगिक संस्थानों को अपने अपशिष्ट पदार्थों को बिना उपचार किए विसर्जित करने से रोका जाना चाहिए।

- औद्योगिक अपशिष्टों को पुनरूत्पादन हेतु प्रयुक्त करने की तकनीक विकसित की जानी चाहिए।

ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण के उपाय

- कल कारखानों को शहर से दूर स्थापित करना चाहिए।
- उद्योगों द्वारा उत्पन्न शोर को कम करने के लिए नवीन तकनीक का प्रयोग किया जाना चाहिए। इसके लिए शोर शोषक दीवारे भी बनाई जा सकती हैं।
- उद्योगों में मशीनों का रखरखाव सही करके , मशीनों का शोर कम किया जा सकता है। खराब मशीनें शोर अधिक करती हैं।
- अधिक शोर उत्पन्न करने वाले कारखानों में श्रमिकों को कर्ण बन्दकों का प्रयोग अनिवार्य कर देना चाहिए।
- कारखानों में ध्वनि रोधक यन्त्र लगाए जाने चाहिए।

उद्योग, आर्थिक विकास की अनिवार्यता है तथा प्रदूषण रहित उद्योग होना असंभव है। अत: प्रदूषण को रोका नहीं जा सकता केवल नियंत्रित ही किया जा सकता है।

शब्दावली

उदारीकरण	–	उद्योग स्थापना विस्तार व निवेश की उदार नीति।
निवेशक	–	उद्योग में पूँजी लगाने वाला व्यक्ति अथवा संस्था।
विशिष्ट	–	अन्य से अधिक उपयोगी और प्रमुख।
भौतिक सभ्यता	–	ठोस वस्तुओं के उपयोग व क्रियाशीलता पर आधारित परिवेश।
केन्द्रीकरण	–	किसी स्थान विशेष पर उद्योगों के स्थापित होने की प्रक्रिया।
अपशिष्ट	–	उद्योगों में प्रयोग के बाद शेष बचा हुआ ठोस अथवा तरल पदार्थ।
निक्षेपण	–	भू-सतह पर ठोस पदार्थ को डालना या जमा करना।

अभ्यास

सही विकल्प चुनिए -

1. भारत की औद्योगिक नीति की घोषणा किस वर्ष में की गई -

   (i) 1947 (ii) 1951

   (iii) 1948 (iii) 1972

2. भारत के सूती वस्त्र की राजधानी है-

   (i) अहमदाबाद (ii) मुंबई

   (iii) इलाहाबाद (iv) इंदौर

3. भारत में नोट छापने के कागज बनाने का कारखाना किस स्थान पर है?

(i) नेपानगर (ii) टीटीगढ़

(iii) सहारनपुर (vi) होशंगाबाद

4. निम्नलिखित उद्योगों में से सबसे अधिक वायु प्रदूषण किसमें होता है?

(i) दियासलाई (ii) कागज उद्योग

(iii) रासायनिक उद्योग (vi) फर्नीचर उद्योग

5. मध्यप्रदेश लघु वनोपज व्यापार एवं विकास सहकारी संघ की स्थापना का वर्ष है-

(i) 1984 (ii) 1994

(iii) 2004 (vi) 1974

अतिलघु उत्तरीय प्रश्न-

1. उद्योग किस कहते हैं?
2. कागज उद्योग का कच्चा माल क्या है?
3. भारत का सबसे बड़ा लोहा इस्पात कारखाना कौन सा है?
4. प्रदूषण से क्या आशय है?

लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. स्वामित्व के आधार पर उद्योग के कितने प्रकार हैं?
2. कच्चे माल के आधार पर उद्योग कितने प्रकार के होते हैं?
3. लोहा इस्पात उद्योग 'आधारभूत' उद्योग क्यों कहलाता है?
4. पश्चिम बंगाल में कागज उत्पादक केंद्र किन-किन स्थानों पर है?
5. वनोपज आधारित कुटीर व लघु उद्योगों की स्थापना की आवश्यकता बताइये।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न-

1. भारत में उद्योग कितने प्रकार के हैं? वर्णन कीजिए।
2. भारत में लोहा इस्पात उद्योग किन चार चरणों में केंद्रित है और क्यों है?
3. भारत में कागज उद्योग के उत्पादन व विपणन क्षेत्रों का वर्णन कीजिए?
4. राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में उद्योगों के योगदान का वर्णन कीजिए।
5. औद्योगिक प्रदूषण पर प्रकाश डालिए।
6. औद्योगिक प्रदूषण को नियंत्रित करने के उपाय बताइए।
7. मध्यप्रदेश में वन क्षेत्रों में कुटीर एवं लघु उद्योग की स्थापना हेतु सुझाव दीजिए।

❖ ❖ ★ ❖ ❖